संकुचित नज़रिया छोड़ें

—मुकुल लाल

स्वामी विवेकानंद ने कहा था "स्त्रियों की अवस्था में सुधार हुए बिना विश्व का कल्याण नहीं हो सकता। पंछी एक पंख से उड़ नहीं सकता।"

आज स्त्रियों को एक बहुत ही अन्यायपूर्ण और असुरक्षित वातावरण में रहना पड़ रहा है। इसके लिए जिम्मेदार कौन है? स्वयं नारी, सामाजिक व्यवस्था या प्रशासन? नारी के ऊपर एक बड़ी

जिम्मेदारी है। सारी अव्यवस्थाएं घर से ही शुरू होती हैं। अपने पिछड़ेपन और ग़लत सोच की वजह से वह असल कारणों की खोज ही नहीं करती है। दूर करना तो बहुत बड़ी बात है।

भ्रूणहत्या, कन्या-शिशु की हत्या, दहेज़-हत्या, नारी स्वयं अपने को ही मिटाने पर तुली है! आज के सामाजिक वातावरण ने बेटियों को परिवार का अनचाहा सदस्य बना दिया है। यह सिलसिला ज़ारी रहा तो जल्दी ही प्राकृतिक संतुलन बिगड़ेगा और इसके सामाजिक परिणाम बुरे होंगें। जीने का

अधिकार हर इंसान का एक बुनियादी मानव अधिकार है, दुनिया का कोई क़ानून इसकी इजाज़त नहीं देता।

मांएं सोचती हैं बेटा कुलदीपक है, बुढ़ापे का सहारा है। लड़की पराई अमानत और बोझ। इस सबसे लड़कियों में शुरू से ही एक हीन-भावना पैदा हो जाती है। उन्हें लज्जाशील, सुशील, कम बोलने वाली और सहनशील नारी के सांचे में ऐसे ढालते हैं कि वे हमेशा पुरुष की बैसाखियों के सहारे चलने को मजबूर हो जाती हैं। न तो वे अपनी प्रतिकूल परिस्थितियों से लड़ने लायक रहती हैं, न अपने पैरों पर खड़ी हो पाती हैं। उन्हें आत्मनिर्भर बनाने के लिए उचित शिक्षा व तकनीकी योग्यता हासिल करने के मौके ही कहां दिए जाते हैं।

संकुचित दृष्टिकोण

मर्दों से पर्दा व परहेज की शिक्षा इस हद तक दी जाती है कि वे उनके साथ सहज नहीं हो पाती हैं। उन्हें सच्चा मित्र या सहयोगी न मानकर हव्वा मान बैठती हैं। इससे अनेक संकुचित मान्यताओं का जन्म होता है। स्वस्थ सामाजिक संबंधों का विकास नहीं हो पाता। यह एक बहुत दकियानूसी और छिछला दृष्टिकोण है कि घर से बाहर हमें भाई, पिता व मित्रवत सहयोग नहीं मिल सकता। इस सोच ने नारी को घर की चारदीवारी और पर्दे के पीछे घुटने को मजबूर कर दिया है।

केवल बेटियों की मां को निरवंश व अपशगुनी होने के ताने सुनने पड़ते हैं। बेटी की मां होने के नाते उसे कोई मान-सम्मान नहीं मिलता। चाहे बेटी कितनी ही गुणी क्यों न हो। आज कानून कहता है कि बूढ़े माता-पिता की देखभाल की ज़िम्मेदारी लड़की की भी है। तो भी हम बेटे-बहू के साथ उपेक्षित, कभी-कभी असम्मानित जीवन बिताना पसंद करते हैं। बेटी-दामाद के घर में हमें ज़्यादा मान-सम्मान मिले, तब भी हम वहां रहना नहीं चाहते। बेटे के रहते बेटी के यहां रहना हीन समझा जाता है। ऐसा है हमारे समाज का नज़रिया।

भारत की 80 फ़ीसदी जनता गांवों में बसती है। वहां महिलाओं की स्थिति और भी खराब है। ऐसे माहौल में अगर कोई महिला आगे बढ़ती है और कुरीतियों व नारी-शोषण के खिलाफ जेहाद छेड़ती है तो उसे चरित्रहीन, कुलटा क़रार दिया जाता है। उसको एक असामाजिक तत्व मानकर उसकी कड़ी आलोचना की जाती है।

नया नज़रिया जरूरी

आज हमें अपने चारों ओर के माहौल को नए नज़रिए से देखने की ज़रूरत है। क्या लड़कियां पढ़ लिख कर मान-सम्मान नहीं पाती हैं? यदि वे सुयोग्य निकलती हैं तो क्या परिवार और देश का गौरव नहीं बढ़ातीं हैं? क्या बेटियों से खानदान रौशन नहीं होता? आज जब अवसर मिल रहे हैं तो महिलाओं ने दिखा दिया है कि वे किसी से कम नहीं हैं। अब सेना व नौसेना में भी महिलाएं शामिल हो रहीं हैं। उन्हें भी उन्हीं कड़े प्रशिक्षणों के दौर से गुज़रना होता है जितना कि उनके पुरुष साथियों को।

मनोबल जरूरी

समानता और खोई प्रतिष्ठा पाने के लिए औरतों को आत्मविश्वास जगाना होगा। अपने मनोबल को बढ़ाना होगा। इसके लिए पहल परिवार के भीतर से करनी होगी। कुलदीपक और गृहलक्ष्मी को सहयोग व समानता की शिक्षा देनी होगी। हमें इस विश्वास के साथ आगे बढ़ना है कि नारी-शोषण व अन्याय को आने वाली पीढ़ी एक बुरे सपने की तरह याद करेगी। □